1952 में शामिल की गईं झांकियां

गणतंत्र दिवस की परेड 1950 में शुरू हुई, लेकिन झांकियां औपचारिक रूप से 1952 में शामिल की गईं। शुरुआती सालों में झांकियां छोटी-मोटी होती थीं। ये संस्कृत और प्राकृत शब्द 'झांकी' से आई हैं, जिसका मतलब है नजारा या झलक। ये मंदिरों के रथ उत्सव और भक्ति काल की जुलूसों से प्रेरित हुआ करती थीं। कई झांकियों पर लोग जमे हुए पोज में खड़े होकर लोककथाएं, खेती या पौराणिक दृश्य दिखाते थे। गणतंत्र दिवस परेड में हर साल आमतौर पर 22 से 30 झांकियां होती हैं। ये राज्यों, केंद्र शासित प्रदेशों, मंत्रालयों और प्रमुख सरकारी संस्थाओं की होती हैं। इनमें संगीत, लोक नृत्य, स्थानीय कपड़े और थीम वाली कहानियां दिखाकर भारत की संस्कृति, इतिहास और विकास के काम दिखाए जाते हैं। पहले झांकियां एकता सिखाती थीं, अब हाई-टेक वाली प्रगति की तस्वीर पेश करती हैं। ये झांकियां सिर्फ परेड का हिस्सा नहीं, बदलते भारत का आईना हैं। हम गरीब से अमीर, पिछड़े से आगे, साधारण से तकनीकी देश बने, लेकिन विविधता बरकरार हर राज्य अपनी कहानी लाता है।

बदलते भारत की कहानी
गणतंत्र दिवस की झांकियों का सफर

मशहूर कमेंटेटर जसदेव सिंह बताते थे कि गणतंत्र दिवस परेड के दौरान राजपथ (अब कर्तव्यपथ) पर दर्शक झांकियों का हर्षध्वनि से स्वागत करते हैं। ये सिलसिला अब भी जारी है। जसदेव सिंह ने करीब आधी सदी तक रेडियो और टीवी पर गणतंत्र दिवस परेड का आंखों देखा हाल सुनाया था। गणतंत्र दिवस की सुबह जब कर्तव्य पथ पर सूरज निकलता है, तो मार्च करते जवान, मिलिट्री बैंड, डांस या कोई करतब दिखाते स्कूली बच्चे और हवाई जहाजों के फ्लाईपास्ट के बीच झांकिया लाखों-करोड़ों लोगों का अपनी तरफ ध्यान खींचती हैं। ये चलती-फिरती कलाकृतियां रंग, आवाज और प्रतीकों से भरी होती हैं। ये भारत की एकता में विविधता की कहानी बयान करती हैं।

विवेक शुक्ला
पूर्व सूचना अधिकारी
यूएई एंबेसी

झांकियों में संस्कृति के साथ सामाजिक मुद्दों का भी समावेश

अब जब हम झांकियां देखते हैं, तो याद आता है, 1950 का साधारण भारत आज दुनिया की चौथी बड़ी अर्थव्यवस्था है, स्पेस पावर, डेमोक्रेसी की मिसाल। झांकियां हमें बताती हैं कि विकास सिर्फ अर्थशास्त्र नहीं, संस्कृति, पर्यावरण, सामाजिक न्याय सबको साथ लेकर चलना है। आप कह सकते हैं कि झांकियों में 1970-80 के दशक में बदलाव आने लगा। अब झांकियां सिर्फ संस्कृति नहीं, सामाजिक मुद्दों पर फोकस करने लगीं। केरल ने 1976 में साक्षरता अभियान दिखाया। तमिलनाडु ने भरतनाट्यम नृत्य पेश किया। झांकियां 1991 के बाद उद्योग और शहरों की तरफ मुड़ीं। तब देश में आर्थिक उदारीकरण की बयार बहने लगी थी। असली बदलाव 1990 और 2000 के शुरुआत में आया। झांकियां बड़ी और कुछ हटकर बनने लगीं। ये हाई-टेक भी हो गईं। डीआरडीओ (DRDO) की झांकी 2000 के बाद गणतंत्र दिवस परेड का नियमित हिस्सा बनने लगीं। ये भारत की रक्षा प्रौद्योगिकियों और आत्मनिर्भरता को दर्शाती है, जिसमें नवीनतम मिसाइलें, रडार सिस्टम, ड्रोन रोधी प्रणालियां, इलेक्ट्रॉनिक युद्ध प्रणालियां और स्वदेशी हथियार प्रदर्शित किए जाने लगे। इनका थीम अक्सर 'रक्षा कवच' होता है। कृषि मंत्रालय (या संबंधित कृषि निकाय जैसे ICAR) की झांकी गणतंत्र दिवस परेड का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रही है, जो अक्सर जैविक खेती, मोटे अनाज (मिलेट्स), पशुधन या कृषि नवाचारों जैसे विषयों पर केंद्रित होती है। इसकी 2023 में 'मिलेट ईयर' पर आधारित झांकी थीं।

सभी राज्यों में खास है दिल्ली की झांकी

इस बीच, सरकार ने 2024 में नया रोटेशन सिस्टम शुरू हुआ, ताकि हर राज्य/केंद्र शासित प्रदेश को हर तीन साल में कम से कम एक बार मौका मिले। पिछले साल 2025 की थीम थी 'स्वर्णिम भारतः विरासत और विकास'। बीते साल 16 राज्य और केंद्र शासित प्रदेशों की झांकियां निकलीं। उत्तर प्रदेश का महाकुंभ मेला को दर्शाती झांकी को बहुत पसंद किया गया था। चूंकि गणतंत्र दिवस का मुख्य आयोजन दिल्ली में होता है, इसलिए दिल्ली की झांकी को देखने के लिए जनता खासी उत्सुक रहती है। वैसे भी दिल्ली लघु भारत है। दिल्ली की झांकी 1952 की परेड का हिस्सा थी। दिल्ली के शुरुआती दौर की झांकियों में सामाजिक और केंद्र सरकार की जन कल्याणकारी योजनाओं पर ही फोकस रहता था। दिल्ली की 1965 की झांकी में देश के कृषि क्षेत्र में बढ़ते कदमों को दिखाया। तब तक देश में हरित क्रांति आ चुकी थी और उस महान क्रांति की नींव राजधानी के भारतीय कृषि अनुसंधान केंद्र (पूसा) और जोंती गांव में ही रखी गई थी। 1965 की झांकी में जोंती के किसान भी शामिल थे। दिल्ली की 1966 की झांकी में सबको शिक्षा देने का वादा था। 1978 में वयस्क शिक्षा और 1979 की झांकी में शराबबंदी पर फोकस था, लेकिन 1990 के दशक बाद दिल्ली को विधानसभा मिल गई। तब यहां की झांकियों का रंग यहां के समाज से मेल खाने लगा। इसका नमूना मिला 1993 में जब दिल्ली की झांकी में यहां की गंगा-जमुनी तहजीब को पेश किया गया। इससे मिलती-जुलती थीम पर 1999 में शाहजहांबाद की जान और शान चांदनी चौक के जीवन, समाज और संस्कृति पर झांकी निकली थी। इसे बहुत पसंद किया गया था। करगिल की जंग विषय था दिल्ली की झांकी का साल 2000 में। करगिल की जंग में कैप्टन अनुज नैयर और कैप्टन मोहम्मद हनीफउद्दीन समेत दिल्ली के कई शूरवीरों ने अपनी जान का नजराना दिया था। अमीर खुसरो के जीवन पर आधारित झांकियां साल 2000 और फिर 2004 में निकलीं। मिर्जा गालिब की शख्सियत पर 2001 में झांकी निकली थी। मेट्रो रेल 2003 तथा 2006 दिल्ली की झांकी के फोकस में रही। दिल्ली की 2019 की झांकी में महात्मा गांधी पर फोकस किया गया। इसमें महात्मा गांधी के दिल्ली में बिताए गए 720 दिनों को दर्शाया गया।

खैर, झांकियों का काम 26 जनवरी को खत्म नहीं होता। कई झाकियां बाद में सार्वजनिक जगहों पर लगाई जाती हैं या सांस्कृतिक आयोजनों, प्रदर्शनियों और स्कूलों में इस्तेमाल होती हैं। ये जैव-विविधता, विरासत संरक्षण, शहर के विकास और सामाजिक कामों के बारे में जागरूकता फैलाती रहती हैं।

सखी री बसंत आया

ठंड कमजोर पड़ते ही सूर्य की गर्माहट धरती को सींचने लगती है। इसी क्षण बसंत के आगमन की मधुर आहट सुनाई देने लगती है। बसंत केवल एक ऋतु नहीं, अपितु नवजीवन, उल्लास और नई शुरुआत का गहन संदेश है। पतझड़ के बाद पेड़-पौधों की नई पत्ती एवं फूलों के साथ प्रकृति का पुनः जागृति होना और खुले आसमान में पक्षियों के झुंड का विचरण ऋतुराज के आरंभ की अनुपम छटा हैं। साथ ही सरसों के पीले खेत लहलहाते हैं, आम के बौर खिल उठते हैं और कोयल की कूक गगन में गूंजती है और अनगिनत फूलों की महक हवा में घुल जाती है, जो वसुंधरा का श्रृंगार कर बसंत का स्वागत करती है।

मानव जीवन में बसंत ऋतु प्रेम, प्रतीक्षा और मानवता का संदेश लेकर आती है। प्रकृति का नवजीवन, सौंदर्य और उल्लास मानवीय भावनाओं में प्रेम, आशा और करुणा का संचार करता है। बसंत पंचमी ज्ञान एवं चेतना के साथ आध्यात्मिकता का प्रतीक हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बसंत ऋतु में प्रकृति का यह परिवर्तन जैसे- हरियाली का फैलना, फूलों का खिलना और मौसम का सुहावना होना, जो मानव मस्तिष्क पर सीधा और सकारात्मक प्रभाव डालता है। वैज्ञानिक अध्ययनों के अनुसार, यह प्रभाव मुख्य रूप से सूर्य की रोशनी, हार्मोनल बदलाव और पर्यावरणीय उत्तेजनाओं से जुड़ा होता है। इस ऋतु में सूर्य की अधिक रोशनी से सेरोटोनिन हार्मोन का स्तर बढ़ता है, जो मूड को बेहतर बनाता है, विटामिन-डी का उत्पादन बढ़ता है, जो प्रतिरक्षा और मानसिक स्वास्थ्य को मजबूत करता है। यह मौसम अवसाद से राहत देता है और ऊर्जा का स्तर बढ़ाता है। इसलिए बसंत ऋतु मस्तिष्क के लिए एक प्राकृतिक 'मूड बूस्टर' का काम करती है।

अंबिका अंबी
लेखिका

सांस्कृतिक दृष्टि से भारतीय परंपरा में बसंत ऋतु का विशेष स्थान है। यह ऋतु न केवल प्रकृति के पुनर्जागरण का प्रतीक है, बल्कि विभिन्न प्रमुख पावन त्योहारों का केंद्र भी है, जो जीवन, ज्ञान, भक्ति, प्रेम और उल्लास के संदेश लेकर आते हैं। बसंत में मुख्य रूप से बसंत पंचमी, महाशिवरात्रि और फाल्गुन की होली जैसे त्योहार मनाए जाते हैं। बसंत पंचमी ऋतुराज बसंत के आगमन की प्रमुख तिथि है। इस दिन विद्या की देवी माता सरस्वती की पूजा होती है, जो ज्ञान एवं रचनात्मकता की प्रतीक है।

महाशिवरात्रि फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को आती है। यह भगवान शिव की आराधना का प्रमुख पर्व है। बसंत की इस ऋतु में यह त्योहार शिव-पार्वती प्रेम और जगत के संतुलन का प्रतीक बन जाता है। फाल्गुन की होली वसंत का सबसे रंगीन और खुशनुमा उत्सव है, जो होलिका दहन से शुरू होकर रंगों की होली तक, यह पर्व बुराई पर अच्छाई की जीत, प्रेम, मित्रता और सामाजिक एकता का संदेश देता है।

बसंत की बहार में रंगों का यह उत्सव प्रकृति के उल्लास को दर्शाता है। बसंत ऋतु के सभी त्योहार भारतीय संस्कृति में ज्ञान, भक्ति, मानवता और प्रेम उल्लास की ऊर्जा है, जो सांस्कृतिक रूप से नवीनीकरण, आशा और सामूहिक उत्सव का प्रतीक बनाए रखती है।

बसंत ऋतु मात्र मौसम का बदलाव नहीं, बल्कि जीवन का एक जीवंत आह्वान है। जैसे-जैसे ठंडी हवाएं गर्म होकर मधुर बनती हैं, वैसे ही हमारे मन की जड़ता भी पिघलने लगती है। यह ऋतु अपने अंदर की सुस्ती को त्यागकर, हर पल उत्साह से जीने की प्रेरणा देती है और साथ सिखाती है कि हर एक अंत के बाद नई शुरूआत प्रतीक्षारत होता है। इसलिए जीवन से कभी हार नहीं माननी चाहिए। बसंत ऋतु धर्म, प्रकृति, संस्कृति और शिक्षा चारों को एक सूत्र में पिरोता है और प्रेम, आध्यामिकता एवं मानवता का संदेश देता है। बसंत जीवन में एक नई शुरुआत का भी शुभ संदेश देता है।

ऋतुराज का आगमन

आप घर का दरवाजा, खिड़की, रोशनदान खोल लीजिए। बाहर ऋतुराज बसंत अपने पूरे वैभव के साथ उपस्थित है। निकलिए और उसका स्वागत कीजिए। उदासी के दस महीने कट गए। पुराने साल को पुराने कैलेंडर की तरह रद्दी में डालिए, मगर ये गौर भी कीजिएगा कि कोरोना महामारी के खौफ ने बहुत कुछ सिखाया भी। बसंत का साहस देखने लायक है, वह जिंदगी के तमाम दु:खों और संतापों को धकिया कर आपकी तरफ लपका आ रहा।

हमारे देश में ऋतुओं/मौसमों का कमाल देखने लायक है। सावन बरसता है, तो केवल खेत-खलिहान ही नहीं, सूखा मन भी भीगता है। पुरवाई चलती है, तो मन-मयूर थिरकने लगता है। ये माघ के कृष्णपक्ष की पंचमी तो असाधारण है। मन को मथने वाले देवता मंमथ, जिन्हें रूप का राजा कामदेव कहते हैं और रानी रति की षोड़शोपचार पूजा का दिन यही बसंतपंचमी है-बाकी तो आप समझदार हैं ही। वाणी की देवी सरस्वती की जयंती भी इसी दिन यानी प्रेम और मस्ती के दरम्यान विवेक व संयम का साथ किसी भी दशा में छोड़ना नुकसानदायक हो सकता है।

संतोष कुमार तिवारी
नैनीताल

बसंत गहरे अर्थ में प्रकृति और मानवजीवन के बीच एकीकरण का महापर्व है। मन को बेलगाम न होने दीजिए। उत्कंठा के वेग का मनोविज्ञान समझिए। बसंत है तो क्या हुआ। अभी तो पूरा फागुन पड़ा है। आम में बौर आ गए, अब मन के बौराने का समय भी सन्निकट है। बसंत-सेना फागुन की अगवानी करने को बेताब है। इन दोनों के मध्य महाशिवरात्रि है। भूतभावन शंकर की बारात सजेगी। मैं तो कहता हूं दूल्हा के वेश में शिवदर्शन अत्यंत मंगलकारी होगा। जब गरल पीते शिव इतने उदार, आशुतोष हैं। उन्हें भार्या रूप में पर्वत-पुत्री पार्वती मिलेंगी। वहीं पार्वती, जिन्होंने भगवान शिव को पतिरुप में पाने के लिए घोर तप किया और अपर्णा कहलाईं। शिव उन्हें ब्याहकर किसी महल या रनिवास में रखने के बजाय फिर सीधे हिमालय पहुंचते हैं।

बहरहाल चारो ओर मस्ती है। जेठ की गरम हवा के बदले फागुनी बयार कानों में मधु घोल रही। गृहस्थ तो अपनी नोन लकड़ी से जूझते हुए अनुरागी मौसम में थोड़ा- थोड़ा बहक रहा, लेकिन यहां तो साधु-संन्यासियों का मन भी मचल उठा। कुछ भी हो, बासंती मौसम को मन में उतरने की आजादी दीजिए। फिर देखिए उसका असर। जीवन मे संताप कम नहीं, मगर तमाम बखेड़े व चिंताओं के बने रहने की वजह भी हमी आप हैं। दिमाग को प्रकृति से विमुख करके लोग बेतहाशा भागे जा रहे, अरे! आगे खाई हैं साथियों।

संघर्ष की पाठशाला से सेवा के पथ तक

सूरज कुमार सिंह
खंड शिक्षा अधिकारी
देवरिया

जॉब का पहला दिन

आजमगढ़ की मिट्टी में पले-बढ़े सपने जब बागपत की धरती पर आकर जिम्मेदारी का रूप लेते हैं, तो यह सिर्फ स्थान परिवर्तन नहीं होता। यह वर्षों के संघर्ष, धैर्य और आत्मविश्वास की परिणति होती है। खंड शिक्षा अधिकारी के रूप में नौकरी का पहला दिन मेरे जीवन का ऐसा अध्याय था, जहां पीछे मुड़कर देखने पर मेहनत की लंबी पगडंडी दिखती थी और आगे सेवा की व्यापक राह।

बागपत स्थित कार्यालय में प्रवेश करते ही माहौल की गंभीरता महसूस हुई। फाइलों की आवाजाही, कर्मचारियों की व्यस्तता और दीवारों पर टंगी योजनाएं- सब कुछ मानो यह बताने के लिए पर्याप्त था कि यह पद केवल अधिकार का नहीं, बल्कि उत्तरदायित्व का है। चारों ओर की निगाहें जिज्ञासु थीं। लोगों के मन में सवाल था, इतनी कम उम्र में खंड शिक्षा अधिकारी कैसे? उस क्षण समझ आया कि पद से पहले भरोसा अर्जित करना होता है और भरोसा केवल काम से बनता है।

नौकरी के पहले दिन मन में मिश्रित भावनाएं थीं। एक ओर नई जिम्मेदारियों का डर, तो दूसरी ओर कुछ नया सीखने और व्यवस्था में सकारात्मक बदलाव लाने का उत्साह। यह उपलब्धि अचानक नहीं मिली थी। इसके पीछे प्रतियोगी परीक्षाओं की लंबी, कठिन और अनुशासनपूर्ण यात्रा रही है। तैयारी के दिनों में कई बार असफलताओं से सामना हुआ, कई बार खुद पर संदेह भी आया, लेकिन हर बार लक्ष्य ने फिर खड़ा किया। आज का तकनीकी युग प्रतियोगी परीक्षाओं को पहले से कहीं अधिक जटिल बना चुका है। ऑनलाइन प्लेटफॉर्म, डिजिटल अध्ययन सामग्री की भरमार, सोशल मीडिया पर तुलना और लगातार बदलते परीक्षा पैटर्न- इन सबके बीच ध्यान, धैर्य और निरंतरता बनाए रखना अपने आप में चुनौती है। तैयारी के दौरान अनेक अभ्यर्थियों, शिक्षकों और अधिकारियों से संवाद का अवसर मिला। इन संवादों ने न सिर्फ ज्ञान बढ़ाया, बल्कि प्रशासनिक सोच को समझने का दृष्टिकोण भी दिया। इस ताकत के पीछे जो सबसे प्रबल स्तंभ था वह मेरी मां के हौंसले और सपनों से बुना था और हर असफलता पर उन्होंने यही कहा कि छोटी असफलताएं बड़ी सफलता को प्राप्त करने की दिशा निर्धारित करती हैं बस धैर्य रखना पड़ता है। आज वह इस दुनिया में नहीं हैं, लेकिन उनके लालन-पालन व संघर्षमयी जीवन हमेशा एक नई ऊर्जा व सकारात्मक अभिप्रेरणा से नित नए कार्यों हेतु बल प्रदान करता है।

बागपत पहुंचकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश की कार्यसंस्कृति और प्रशासनिक व्यवस्था को करीब से देखने का अवसर मिला। यहां की समयबद्धता, अनुशासन और जमीनी स्तर पर काम करने की परंपरा ने विशेष रूप से प्रभावित किया। शिक्षा व्यवस्था में सुधार और नवाचार की व्यापक संभावनाएं स्पष्ट दिखीं। पहले ही दिन यह एहसास हुआ कि अधिकारी होना लक्ष्य नहीं, बल्कि व्यवस्था को बेहतर बनाना उद्देश्य है। नौकरी का पहला दिन मेरे लिए केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं था, बल्कि एक संकल्प का आरंभ था। ईमानदारी से काम करने, सीखते रहने और शिक्षा के क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव लाने का संकल्प। यह कहानी उन युवाओं के लिए है, जो तकनीकी युग की चुनौतियों के बीच भी अपने सपनों पर भरोसा रखते हैं। शुरुआत कठिन हो सकती है, रास्ता लंबा हो सकता है, लेकिन यदि इरादा स्पष्ट हो और मेहनत निरंतर, तो मंजिल अपने आप रास्ता दे देती है। अंत में स्वलिखित पंक्तियों से अपनी बात खत्म करता हूं-

हवा ऐसी चली कि कोई समझ ही नहीं पाया 'सूरज'...
किसी को मिली ज़न्नत तो किसी के हिस्से दोजख़ आया।